DOI: 10.51220/hjssh.v4i1.4

Himalayan J. Soc. Sci. & Humanities, Vol 4 pp. 45-51, 2009

नाथ पन्थ पंवार वंशीय राजाओं के परिप्रेक्ष्य में

अजय नेगी

मानवशास्त्र विभाग, हे.न.ब. गढ़वाल विश्वविद्यालय श्रीनगर गढ़वाल

Received 19-02-2009 Accepted 14-12-2009

ABSTRACT

उत्तराखण्ड का इतिहास 1000 ई0 से 1803-04 तक एक ऐतिहासिक धरोहर बन कर रहा है। दिल्ली सल्तनत का भी उत्तराखण्ड के इतिहास में एक हिस्सा रहा है। शाही सेनाओं ने कई बार उत्तराखण्ड के मानसखण्ड व केदारखण्ड की ओर आक्रात्मक रूख अख्तियार किया। धीरे-धीरे इतिहास सिमटता गया तथा मानसखण्ड व केदारखण्ड के राजाओं में अपने एकाधिकार के वर्चस्व की लड़ाई होने लगी तथा अन्ततः मानसखण्ड के चन्द्रवंशियों ने एकाधिकार जमा दिया। प्रस्तुत शोध पत्र में नाथ पन्थ का पंवार वंशीय राजाओं के प्ररिप्रेक्ष्य में विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

Keywords :- *Nath Sect, Related Panwar Dynasty, Uttarakhand.*

16वीं शदी में जब मानस भूमि और केदार भूमि में एकछत्र राज्यों की स्थापना हो रही थी तब 1526 ई0 में बाबर ने उत्तर भारत में मुगल साम्राज्य की स्थापना की इस वंश के उदार सम्राट अकबर ने हिन्दू वादी राजाओं से मिलकर साम्राज्य का विस्तार किया। धीरे-धीरे आगे वंश के बढ़ते हुए सम्राट औरंगजेब की निरकुंशता ने साम्राज्य की जड़ें हिला दी। इतिहास भी समय के अनुसार बदलता गया। मराठों, सिक्खों रोहिलों, पठानों, अवध के नबावों का उत्तर भारत पर एकाधिकार जमाने का स्वप्न धरा ही रह गया। अंग्रजों ने उत्तर भारत पर 1803 में अपना अधिकार जमा दिया।

तब इस छोटे से पहाड़ी राज्य के इस युग की भाषाओं का अलग-अलग प्रस्तुती हुई। संस्कृत, हिन्दी, गढ़वाली, कुमाऊँनी, मराठी, पंजाबी, तिब्बती, उर्दू, परसियन, तुर्की, अंग्रेजी, फ्रेन्च, स्पेनिश, पौर्चगीज, इटैलिन इत्यादि रही है। सामाजिक विज्ञान में इतिहास की एक बहुत बड़ी उपयोगिता है। इतिहास वर्तमान व भविष्य को आलोकित करता है। किसी समाज का प्रतिपादन का उल्लेख करने के लिए समाज विज्ञान को हर तरह की कसौटी पर खरा उतरना पड़ा है। भारतीय मान्यताओं के अनुसार इतिहास का क्षेत्र केवल घटनाओं के वर्ण मात्र तक ही सीमित नहीं है। किसी भी समाज में वर्णित हर कार्य के साथ उसमें भाग लेने वाले व्यक्तियों को जीवन में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की उपलब्धियों के बारे में जानना भी जरूरी है कि वे धार्मिक मान्यताओं के अनुसार जीवन बिताने को

© SHARAD

स्वतन्त्र थे या नहीं या उनकी सांसारिक आवश्यकताओं की पूर्ति होती थी या नहीं, या वे पारलौकिक भविष्य के लिए आशावान थे या उनकी आस्था के आयाम कितने सबल थे। पारलौकिक का लौकिकता पर कितना प्रभाव था जीवन संयम-नियमी था कि नहीं, इससे भावी पीड़ियों पर कितना प्रभाव पड़ा।

धर्मार्थ काममोक्षाणायपदेश समन्वितम्।
पूर्ववृंत कथायुक्तमितिहास प्रचक्षेते।।[1]

आस्था के आधार पर सामाजिक परिवर्तन के स्वरूप बनते हैं। जब-जब प्रकृति अपना परिवर्तन चाहती है उसके आधार पर ही धर्म की एकाग्रता तथा समानता रहती है। उत्तराखण्ड हिमालय वैसे ही अपनी नैसर्गिकता का एक स्वरूप लिये हैं। जहां पर किसी भी धर्म (मार्ग) का 'पन्थ' अपना स्थान बना सकता है। इसके लिए यह हिमालय आगन्तुकों के लिए रहस्यमय मुस्कान लिये स्वागार्थ बाहें बाये खड़ा रहा है।

हिमालय पहले से ही रहस्यपूर्ण रहा है। तन्त्र-मन्त्र विधाओं से भरा हुआ 'शिव-शक्ति' का मूल केन्द्र कैलाश अधिक विख्यात रहा है। जो पूरे ब्रह्मण्ड में है, वही पिण्डस्वरूप में भी हैं, यह मान्यता भारत में सामान्य जाति तक पहुँचाती है। भौतिक कैलाश और हिमालय मानव शरीर के सहस्त्रार्थ और उससे सम्बन्धित अन्य हैं। मेरूदण्ड हिमालय हैं। 'शिव-शक्ति' उपासी कालीदास ने भी कई ग्रन्थ लिखे हैं। जो कि आध्यात्मिक तौर पर एक रमणीय स्थल रहा है। सभी धर्मो के पन्थों ने यहां आकर अपने को स्थापित किया। केदारखण्ड, मानसखण्ड व (पशुपति) नेपाल खण्ड इससे अछूते नहीं हैं। यहां पर स्थापित राजाओं ने राज्य की सीमायें बढ़ाने के साथ-साथ धार्मिकता के पहलू को कभी नहीं छोड़ा उसका स्थान राज्यस्तरीय सामाजिकता में भी प्रबल रहा है। अनेक गुरुओं का भी उसमें समावेश रहा है। पशुपति नाथ (नेपाल), केदारनाथ, केदारखण्ड में बदरीनाथ व अन्य हिन्दू राजाओं के राज्य में स्थायित्व लाने तथा कैलाश भूमि होने से यहां पर आदिनाथ (शिव) ने ही गोरक्ष नाथ रूप में अवतार लिया जो गुरु गोरखनाथ के रूप में प्रसिद्ध हुए। वे ही नाथ पंथ के संगठन कर्त्ता थे। उनका व्यक्तित्व व्यापक तथा सर्वव्याप्त था। किसी एक क्षेत्र में सीमा हटाना उनकी गरिमा घटाना हैं-

दखिणी जोगी रंगा चंगा, पूरबी जोगी वादी।
पछिमी जोगी वाला भोला सिद्ध जोगी उत्तराधी।।

नाथ परम्परा :

भारत का उत्तरी भाग उनकी साधना का स्थल बना जो कि प्रमुख जगहों का एक साधना स्थल

इतिहास के पहल पर बना 'नाथ' शब्द का अर्थ- नाथ सृष्टि की उत्पत्ति है। दर्शन शास्त्र व संहिता शास्त्र में नाथ ब्रह्म, शब्द ब्रह्म का विवेचन मिलता है। नाद संगीत शास्त्र व प्रतीकात्मक रूप 'शिव के ढमरू से ही सृष्टि की ब्रह्मनाद की उत्पत्ति मानी गयी है। जिसे नाथ-पन्थ कहा गया है। नाथ-पन्थी भी आदिनाथ 'शिव' को ही मानते हैं। जो नाद् के जानकार हैं। आज भी भारत में 'नाथ' दीक्षा की अनेक संस्थायें कार्य कर रही हैं।

नाथ पन्थः- 'नाथ' जो कि परमतत्त्व स्वीकार है, या परम-तत्त्व योग साधना करते हैं। वे दीक्षा के पश्चात् नामान्त में 'नाथ' उपाधि जोड़ते थे। उनके अनुयायियों को नाथ पन्थी कहते थे।[2]

दूसरा उदाहरण- गोरखनाथ ने जिस योग मार्ग का संघटन किया था उसे 'नाथ योग' कहते हैं। नाथ योगियों का विश्वास है। इस पन्थ के प्रवर्तक आदिनाथ स्वयं भगवान शंकर है। गोरखनाथ को भी शिव स्वरूप ही माना जाता है। 'नाथ योग' को सिद्धमत व अवधूत मत भी कहते हैं। नाथ पंथियों के अनुसार नाथ ही सच्चे सिद्ध हैं।[3]

इनका सम्प्रदाय नाथ सम्प्रदाय है 'ना' का अर्थ है अनादि, 'थ' का अर्थ है संसार में स्थापित होना नाथ का मतलब समूचा ब्रह्माण्ड, जो मोक्ष की बात करता है।

अहमेवास्मि गोरक्षो मद्रुपं तन्निवोधत्।
योन-मार्ग-प्रचाराय मया रूपमिदं धृतम्।।[4]

भगवान शंकर ने गोरखनाथ का रूप रखकर योग मार्ग का प्रचार किया। 'नाथ' का मूल शब्द अर्थ है 'आदेश'। इस का रूप है शून्य जो निराकार व निरंजन है। भगवान गोरखनाथ अनादि है। वे दक्षिण में 'गोरक्ष' नाम से प्रसिद्ध हुए अर्थात् शून्य उनकी माता है। व्ययधर उनका पिता है। वे महायोगी व निराकार है।

गौ सेवी गोरक्षनाथे गायत्रीधर सम्भवः।
योगीन्द्रः सिद्धदो गोप्ता योगिनाथो युगेश्वर।।[5]

'गो' का मतलब है। इन्द्रियों को वश में करना। योग-दर्शन व योग सम्मत। जीवन-पद्धति पहले भी भारत में थी। योग दर्शन के प्रवर्त्तक महर्षि पतंजलि थे। गुरु गोरखनाथ ने पातंजल योग दर्शन को युग-सम्मत मानकर अपने पन्थ में उसे आत्मसात् किया। नाथ पन्थ-सिद्धमत, सिद्धमार्ग, योग मार्ग, योग सम्प्रदाय, अवधूत मत से भी जाना जाता है। नाथ पन्थ की साधना पद्धति का एक नाम 'हठयोग' भी है। 'ह' का मतलब सूर्य, 'ठ' का मतलब चन्द्र। इसमें 'हठयोग' सम्पूर्ण संसार को शून्य-मानकर समाधि

लगा देता था। गुरू गोरखनाथ ने लिखा है कि 'विवेक' से ही साधना परिपक्व होती है।[6]

स्कन्ध पुराण के भक्ति विलास में 51 व 52 अध्यायों में गोरखनाथ जी का जीवन चरित्र वर्णन है। उन्होंने मन्दाकिनी के तट पर तपस्या की थी। वहीं पर उनको सिद्धि प्राप्त हुई थी। यह स्थान अत्यन्त निर्जन है। स्कन्द पुराण के केदारखण्ड में निम्न नाथों के नाम हैं- आदिनाथ, अनादिनाथ, भवनाथ, सत्यनाथ, भी सन्तोष नाथ, मत्स्येन्द्रनाथ व गोपी नाथ। ये लोग योगी ही नहीं थे वरन् नवीन राज्यों की स्थापना इन्होंने की थी। जिसमें से पंवार वंश मुख्य है।[7]

आगे चलकर यह परम्परा असीम धर्म मार्ग पर चलती गयी। हिमालय के हिन्दु राजाओं (पंवार) ने इस परम्परा को अपनी राजनैतिक व सामाजिक दायरे के पहलू पर रखा।

पंवार वंश व नाथ गुरू :

गढ़राज्य के संस्थापक भौना पाल व भुवन पाल (जो कि राजा कनक पाल का अलंकारित नाम था।) की माँ ने नाथों के नाथ 'सत्य नाथ' को बावन रोटियाँ प्रसाद के तौर पर खिलायी थी जो वरदान स्वरूप बावन गढ़ों का अधिपत्य व बावन पीड़ियों तक का स्थायित्व मिला। जिन्हें इतिहासकार राजा कनकपाल के रूप में जानते हैं। जो कि पाँच गते बैशाख सम्वत् 745 वि0 तदनुसार अप्रैल सन् 688 को गद्दी पर (चाँदपुर) बैठे।[8-9]

जन श्रुति के अनुसार-

स्वयं महादेव ने अवतार बन कर बदरी नारायण की भूमि में पवांर वंशीय राजा को राज्य के लिये प्रोत्साहित किया। देव संयोग से कनकपाल को धार नगरी से यहां आना तथा राज्य विस्तार करना जो कि तीर्थाटन था किन्तु दैव संयोग से उनका राज्य यहां पर स्थापित हुआ जो कि खुद में एक 'देव संयोग' था जिसमें लौकिकता के साथ-साथ आलौकिकता का भी सार था। पंवार वंश का उद्गम का संयोग इसी तीर्थाटन के संयोग का एक हिस्सा था जो कि गढ़वाल के इतिहास में स्वर्ण रचित हुआ। गुरू गोरख नाथ संप्रदाय इस काल का स्वर्णमय रहा है जो कि धार्मिक आख्यान बन कर इस वश का (पंवार) इतिहास का स्वप्न बन कर उद्भव हुआ तथा पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ता गया। राज्य की राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक जरूरतों का भी एक अंग बन गया। यह (नाथ पन्थ) व्यवस्था राज्य स्तरीय सीमाएं बढ़ाने तथा प्रसार, प्रचार का एक माध्यम भी बनकर एक अनुकरणीय दिव्य स्वरूप रही। राज्य सीमाएं मध्य हिमालय, उच्च हिमायल तथा शिवालिक सीमा तक जो कि गंगा-यमुना के तराई मैदान तक बढ़ी तथा उनमें एक स्थायितत्व का सामंजस्य बना। उसके पीछे काफी धार्मिक आख्यान

भी जुड़े रहे हैं। देश काल, विपरीत परिस्थितियों के चलते पंवार वंश शासन काल को प्रोत्साहित किया तथा उन पर संयोग वश उन्होंने वर्चस्व कायम रखा। अपने धर्म गुरूओं (नाथ जोगी) की अनुकम्पा उन पर रही जो कि उनकी आने वाली पीढ़ियों के लिए साधना, योग की एक कार्य-सार बन कर पुलकित हुई। तदोपरान्त इस वंश के ऐतिहासिक धरोहर बन कर तत्कालीन समाज की एक व्यवस्था (धार्मिक) बन गयी, जिसका इतिहास हमेशा के लिए एक 'धर्म-पन्थ' बन कर पंवार वंश का अंग बन गया।[10]

प्रशासनिक क्षमताओं का दौर भी उन सभी मान्यताओं के आधार पर चलने लगा। परम्पराएं वृहद आकार बन कर उसका स्वरूप बन कर बनने लगी। युद्ध प्रिय (पंवार) राजाओं में एकाग्रता का भी साकार बनने लगा। धीरे-धीरे सभी का सार बनने लगा। एवं सभी पक्षों के आधार पर एक 'पन्थ' में सिमटकर एक दिये की 'लौ' की तरह बनकर प्रकाशमान हो गया। वह एक दृश्य दीप बनकर सभी को दृष्टि दीपमान करने लगा।

व्यवस्थाओं का यह दौर काफी रमणीक शोभनीय बन गया। धीरे-धीरे पूरा समाज उसमें वशीभूत होकर चलने लगा। 'पंवार' राजाओं का यह धार्मिक आधार एक आलौकिक आधार बन कर एक लौकिकता का स्वरूप भी लेने लगा।

अत: 'नाथ पन्थ' का एक नैर्सगिक स्वरूप पंवार वंशीय राजाओं का तत्कालीन समय का यह एक ऐतिहासिक धार्मिक संजीवनी थी जो काल-काल तक स्मरणीय बन एक आलेख बन गयी। जिसे हम उनको एक शोधीय आधार पर विवेचनात्मक पहलू पर भी रखते हैं जो कि युगों-युगों तक उस युग की एक 'पन्थीय' परिकल्पना बन कर सुशोभित रही है। जिसने उस समय के इतिहास को एक धार्मिक स्वरूप दिया।

सामाजिक व्यवस्था :

शासन सत्ता के चलते-चलते भक्ति मार्ग का भी चलन बड़ा रामानुज, रामानन्द, उध्व-आनन्द तीर्थ, बल्लभाचार्य, चैतन्य आदि सन्तों ने समाज में एक धार्मिक आन्दोलन शुरू किया जिसके चलते-चलते ये सभी आगुन्तक उत्तराखण्ड की भूमि में भी आये। केदार भूमि को देव भूमि मानने की परम्परा जो सहत्रों वर्ष पूर्व आरम्भ हुई थी। यह ग्यारहवीं से पन्द्रहवीं शताब्दी तक बनी रही केदार भूमि का विस्तार कनखल से लेकर कैलाश मानसरोवर तक माना जाता है। तथा ऋग्वेद के सम्पादन तक गंगा-यमुना में देवीतत्व की कल्पना थी। संहिताओं, उपनिषदों, आख्यानों, सूत्रों, धर्म शास्त्रों, रामायण, महाभारत, पुराणों के पठन-पाठन की परम्परा केदारभूमि के कण्डवाश्रम, बदरिकाश्रम आदि में चिरकाल

तक बनी रही नौंवीं शती के आरम्भ में श्री शंकराचार्य ने कुछ काल तक यहां रहकर ब्रह्मसूत्र, गीता, प्रधान उपनिषदों पर भाष्य लिखे 820 ई0 में केदार नाथ पहुँच कर अपना शरीर त्याग दिया था।[11]

नाथ सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य गुरू गोरखनाथ ने जो ग्यारहवीं शती में केदार तीर्थ के आस-पास चिन्तन किया। वर्तमान समय पर 1500 ई0 में पंवार वंशीय राजा महाराजा अजेयपाल का राज्य था। वे भी नाथ सम्प्रदाय के सम्मुख नतमस्तक थे। उनकी अनुकम्पा उन पर इतनी थी कि कई युद्ध उनके कहने पर उन्होंने जीते थे, तथा राज्य का विस्तार किया। जनुश्रुति के अनुसार 'अजेय पाल पंवार के राज्यारम्भ में चंपावत नरेश से पराजित होकर वह एक पर्वत पर चढ़ गया भगवान भोले नाथ का स्मरण करने लगा। भगवान शिव ने राजा को सत्यनाथ-भैरव के रूप में दर्शन दिया और उसे अपने कन्धे पर बिठाया। शिवजी (सत्यनाथ भैरव) ने अपना शरीर इतना बढ़ाया। राजा की दृष्टि उधर हिमालय तक इधर हिमालय की शिवालिक श्रेणी तक पहुँची और कहा-जहां-जहां तक तुम्हारी नजर पड़ी है वहां-वहां तक तेरा राज हो जायेगा। जो कि बाद में राज्य की सीमायें बनी है।[12] महाराजा पंवार ने श्रीनगर को राजधानी बनाकर गुरू गोरख नाथ की परम्परा को बढ़ाया तथा गुरू गोरख नाथ गुफा का निर्माण किया। सन् 1512 ई0 में उन्होंने सत्यनाथ भैरव के मन्दिर की स्थापना देवल गढ में की वे नाथों में एक सिद्ध नाथ थे। देवलगढ़ के शिलालेखों में 'अजेय पाल को धर्म पाथी' कहा गया है। नाथ-महात्माओं के संसर्ग से महाराजा अजेयपाल की भी सिद्ध महात्माओं में गिनती होने लगी थी। नाथ सिद्धों की सूचियों में 'पंवार वंशीय' राजाओं का नाम भी मिलता था।उन सूचियों में राजा भतृहरी, गोपीचन्द और अजेयपाल के नामान्त में 'नाथ' 'पाद' या 'पा' लगे नहीं मिलते।

राजा होने के कारण तीनों राजाओं ने नामान्त होने पर 'नाथ' नहीं लगाया। ये नाथों में 'सिद्ध नाथ' के समान थे। महाराजा अजेयपाल सिंह पंवार को राज्य स्थापना की प्रेरणा देने वाले 'सत्यनाथ' ही हैं। यह मन्दिर आज भी देवलगढ़ में हैं। नाथ सम्प्रदाय का आगे आने वाली पंवार वंश की पीढ़ी पर काफी लम्बे समय तक प्रभाव बना रहा इसकी शुरूआत पंवार वंशीय चक्रवती राजा-महाराजा अजेय पाल पंवार ने की थी। इस प्रकार गढ़वाल का राज्य नाथ पन्थ के योगियों से प्रभावित रहा जो कि उन्नसवीं शताब्दी तक रहा।[13]

मानव शास्त्रीय दृष्टिकोण :

सामाजिक परम्परायें किसी न किसी रूप में संगठित होकर चलती हैं। वह परिपाटी चाहे राज तन्त्र की हो या समाज की, यानि कि राजा लोग ऐश्वरीय विधान के साथ-साथ एक धर्म सम्बन्धी

आलौकिक शक्ति को भी मानकर चलते थे। वैसे भी राज तन्त्र में राजा ईश्वर के समान माना जाता था। पंवार वंशीय राजाओं के अलावा भी भारत में अन्य कई राजाओं का ईश्वरीय शक्तियों का आभास था। जिसके चलते हुए वे लोग राज्य करते थे। जैसे- राजस्थान के राजा पृथ्वीपाल चौहान के पास अद्वितीय शक्ति थी जो उनके अपने 'कुल ईष्ट' से मिली थी। जिसमें उनको 'दिशा आवाज' सुनकर ही निशाना लगाने की महारथ थी। ऐसे ही शैव परम्परा से जुड़े राजा 'नहूष' व ययाति महाभारत कालीन समय के सबसे धर्मावलम्बी राजा रहे। भारत की इस धरती पर विशेषकर हिमालय में धर्म और अध्यात्म श्रेयष्कर रहा है। क्योंकि राजाओं का आखिरी समय (वानप्रस्थ) हिमालय में ही बीता। कहने का तात्पर्य यह है कि हिमालय एक शान्त व देवस्थल है जो कि आदि-आदिकाल से रहा है। यहां पर नांग पन्थ के अवशेष आज भी विद्यमान हैं। जहाँ पर वर्तमान में विभिन्न तिथियों में पूजा पाठ का हार्दिक आयोजन होता रहता है।

संदर्भ :

1. शिव प्रसाद डबराल, 'चारण' उत्तराखण्ड का इतिहास, वीरगाथा प्रकाशन, दुगड्डा गढ़वाल।
2. डा0 विष्णु दत्त कुकरेती, 'नागपन्थ' गढ़वाल के परिप्रेक्ष्य में।
3. हिन्दी साहित्य अनिर्दिष्ट शोध भूमियां, भगवती सिंह, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1977, पृ0 7।
4. श्री गोरक्ष सहस्त्रनाम स्त्रोत।।6।।
5. वही
6. डा0 नागेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 1988, पृ0 84।
7. गोरक्ष सिद्धान्त।
8. विलयम्स-मेम्बायर आब देहरादून, पृ0 79।
9. मौलाराम-गढ़राज्य वंश काव्य, पृ0 34-36।
10. बड़थवाल, गोरखवानी, पृ0 24।
11. पं0 हरिकृष्ण रतूड़ी, गढ़वाल का इतिहास, पृ0 364-366।
12. वही
13. दिवंगत महन्त नाथ बाबा, गोपाल नाथ से व्यक्तिगत चर्चा, सन् 2008